© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS | Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 04 , Issue : 07 | October - December 2018

मोक्ष प्राप्ति में कर्मयोग की उपयोगिता

श्री जयपाल सिंह राजपूत, नीलम
[1]सहायक प्राध्यापक, योग विज्ञान , चौ. रणबीर सिंह विश्वविद्यालय, जीन्द।
[2]एम॰ए॰ योग द्वितीय वर्ष , चौ. रणबीर सिंह विश्वविद्यालय, जीन्द।

शोध आलेख सार–
आधुनिक युग में इंसान इतना व्यस्त हो गया है की उसके पास न तो खुद के लिए समय है न ही परिवार और दोस्तों के लिए। उसे न तो याग का पता है और न मोक्ष का लेकिन मोक्ष की प्राप्ति हर किसी को चाहिए चाहे उसे मोक्ष की जानकारी हो या न हो। वह केवल स्वर्ग को जानते है स्वर्ग में जाने की इच्छा रखते हैं। इसके लिए अच्छ कार्यो की जरूरत है जो श्री मद्भगवद गीता में कर्मयोग को सर्वश्रेष्ठ माना गया है गृहस्थ और कर्मठ व्यक्ति के लिए यह योग अधिक उपयुक्त है प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी कार्य में लगा हुआ है पर हम में से अधिकांश अपनी शक्तियों का अधिकतर भाग व्यर्थ खो देते हैं क्योंकि हम कर्म के रहस्य को नहीं जानते।

जीवन की रक्षा के लिए, विश्व की रक्षा के लिए कर्म करना आवश्यक है किन्तु यह भी एक सत्य है कि दुःख की उत्पत्ति कर्म से ही होती है सारे दुख और कष्ट आसक्ति से उत्पन्न होते हैं।

ISSN 2454-308X
9 770024 543081

भूमिका–

कर्म शब्द 'कृ' धातु से बनता है कृ धातु में मन् प्रतयय लगने से कर्म शब्द की उत्पत्ति होती है कर्म का अर्थ है– क्रिया व्यापार, भाग्य आदि। जिस कर्म में कर्त्ता की क्रिया का फल निहित होता है वही कर्म है कर्म करना मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृति है वह हर पर कोई न कोई कर्म अवश्य करता रहता है जैसे' सांस लेना, पलको का झपकना जीवन में पूर्णता प्राप्ति के लिए हमारे पूर्वज मनोषियों ने तीन मार्ग बताये है ज्ञानयोग, भक्तियोग और कर्मयोग। ज्ञानयोग उच्च बौद्धिक चेतना सम्पन्न, चिन्तन प्रधान भाव अर्जन करने की प्ररेणा देता है और भक्तियोग में हृदय की शुद्धि आत्म समर्पण की उत्कृट भावना अनन्य प्रेम को आवश्यक बताया गया है किन्तु कर्मयोग का समावेश भी इन दोनो के साथ आवश्यक माना गया है। समाज की स्वार्थहीन सेवा कर्मयोग है यह हृदय की शुद्ध करके अंतकरण को आत्मज्ञान रूपी ज्योति प्राप्त करने योग्य बना देता है जरूरी बात तो यह है कि बिना किसी आसिक्त अथवा अंहकार के आपको अपने देश की सेवा में येागदान देना चाहिए। कर्मयोग में कर्मयोगी सारे कर्मो और उनके फल को भगवान के अर्पण कर देता है ईश्वर में आस्था रखते हुए आस्क्ति को दूर करके सफलता व असफलता में समान रूप से रह कर कर्म करते रहना ही कर्मयेाग है।

कर्मयोग सिखाता है कि कर्म के लिए कर्म करो आसक्ति रहित होकर कर्म करने कर्मयेागी इसीलिए कर्म करता है कि कर्म करना उसे अच्छा लगता है और इसके पेर उसका कोई हेतु नहीं है। कर्मयोगी कर्म का त्याग नहीं करता वह केवल कर्मफल का त्याग करता है और कर्मजनित दुःखों से मुक्त हो जाता है उसकी स्थिति इस संसार में एक दाता के समान है और वह कुछ पाने की कभी चिन्ता नहीं करता वह जातना रहा है और बदले में कुछ मांगता नहीं। इसीलिए वह दुःख के चुंगल में नहीं प्ड़ता वह समझता है कि दुःख का बंधन आसक्ति की प्रतिक्रिया का ही फल हुआ करता हैव।

1) महर्षि कणाद के शब्द में, 'कर्म वह है जो द्रव्य के आश्रित हो, गुण न हो और संयोग तथा विभाग में अनपेक्ष कारण हो।"
2) अत्रभट्ट के अनुसार , "कर्म वह है जो संयोग तो न हो परनतु संयाग का समवायि कारण अवश्य हो।

3) पांतजल योग सूत्र में कर्मो को चार वर्गो में रखा है शुक्ल कर्म (पुण्य कर्म) कृष्ण कर्म/पापकर्म) शुक्ल कृष्ण कर्म (पुण्य–पाप मिश्रित कर्म) अशुक्ल–अकृष्ण (न पुण्य न पाप कर्म) जिन कर्मो से अपना या पराया किसी का अहित नही होता अपित हित होता है। वह कर्म शुक्ल या पुण कर्म कहलाते हैं। अन्यों की अहित करने वाले कर्म कृष्ण या पाप कर्म कहलाते हैं। शुभ व अशुभ मिश्रित कर्म शुक्ल कृष्ण कर्म के अन्तर्गत रखे गये है। सामान्य व्यक्ति के कर्म शुक्ल–कृष्ण प्रकार के ही होते है। जो कर्म, कर्मफल की आशा से रहित होकर किये जाते हैं। उन्हें आशुक्ल अकृष्ण कहते है। गीता में इन्हें ही निष्काम कर्म की संज्ञा दी गई है।

4) महर्षि वाल्मिकी कहते है कि हे कल्याणी, मनुष्य शुभ या अशुभ जैसा भी कर्म करता है।, उसी के अनुरूप फल प्राप्त करता है कर्ता अपने पापकर्मो का फल धोरकाल आने पर अवश्यमेव प्राप्त करता है जैसे मौसम आने पर वृक्ष पुष्पों को प्राप्त होते हैं।

मनुष्य का जीवन एक खेत है जिसमें कर्म बोये जाते हैं। और उन्हीं के अच्छे–बुरे फल काटे जाते हैं जो अच्छे कर्म कतरा है, वह अच्छे फल पाता है बुरे कर्म करने वाल, बुराई करने वाला बुराई समेटता है।

5) जिस प्रकार कोई भी मनुष्य किसी भी काल में क्षणमात्र भी कर्म किये बिना नहीं रहता क्योकि सारा मनुष्य प्रकृति जनित गुणों द्वारा परखरा हुआ कर्म करने के लिए बाध्य किया जाता है। अर्थात मनुष्य को न चाहते हुए भी कुछ न कुछ कर्म करने होते है और ये कर्म ही बंधन के कारण होते है।

साधारण अवस्था में किये गये कर्मो में आसक्ति बनी रहती है। जिससे कई प्रकार के संस्कार उत्पन्न होते है। जिसके कारण मुनष्य इस जीवन–मरण के चक्र में फंसा रहता है ये कर्म बिना आसक्ति के किये जाये तो मोक्ष का कारण बनते है। गीता में कृष्ण कहते है कि –

6 तेरा कर्म करने में ही अधिकार है उसके फलों मं कभी नहीं इसीलिए तू कर्मो के फला का हेतू मत हो तथा तेरी कर्म न करने में भी आसक्ति न हो अर्थात् व्यक्ति को बिना इच्छा शक्ति के होकर कर्म करने चाहिए कर्म के बदले कुछ चाह नहीं रखनी चाहिए तभी वह मोक्ष के मार्ग में आगे बढ़ सकता है।

7 यदि युद्ध में मारा जाकर स्वर्ग को प्राप्त होगा अथवा संग्राम में जीतकर पृथ्वी का राज्य भोगेगा। इस कारण है अर्जुन तू युद्ध के लिए निश्चय करके खड़ा हो जा। फल में आसक्ति मत रखे।

फलासक्ति रखोगे तो जन्म–मरण के चक्कर में फँसोगे। शीघ्र ही मोक्ष या अमरत्व–प्राप्ति की अपेक्षा नहीं की जा सकती।

8 शरीर, वाणी व मन के द्वारा की गयी चेष्टाएँ कर्म कहलाती है ये चेष्ठाएं हमारे चित्त पर अंकित हो जाती है। चित्र पर अंकित में चेष्ठाएँ ही संस्कार कहलाती है। इस प्रकार 'कर्माशय' का निर्माण होता है कर्माशय का अर्थ हुआ "कर्मो के संस्कार" ये कर्मो के संस्कार दो प्रकार के हो सकते हैं।

1) पुण्यात्मक 2) अपुण्यात्मक

इसके साथ–साथ हमें यह भी जान लेना चाहिये कि पुण्यात्मक व अपुण्यात्मक दोनों प्रकार के कर्म अविद्या, अस्मिता आदि क्लेशों से प्रेरित होकर किये जाते है। इसीलिये क्लेशमूल वाले कहे गये हैं। ये कर्म संस्कार कर्मकर्ता को दृश्यमान इस वर्तमान जन्म में व अदृश्यमान भावीजन्म में फल देते है।

9 मनुष्य के जीवन में कर्म एक अनिवार्य अंग के रूप में विद्यमान है, किसी भी क्षण बिना कर्म के कोई भी व्यक्ति नहीं रहता है। कर्म के द्वारा संस्कार बनते है और यही कर्म संस्कार अन्य जन्म

का कारण बनते है इस प्रकार यह श्रृंखला चलती रहती है। किन्तु विवेकवान वही है जो कर्म को सजगतापूर्वक करता है योगी के कर्म इसी प्रकार के होते है जिसमें किसी तरह के फल की आकांशा नहीं रहती है वे न ही पाप कर्म करते है नहीं पुण्य कर्म करते है। इन दोनों से ही भिन्न वे निरासक्त अर्थात आसक्तिरहित कर्म करते है जिससे उनके कर्म पाप–पुण्य से रहित हो जाते है जो बंधनकारक नहीं होते है।

10 गीता में कृष्ण अर्जुन से कहते है कि यदि युद्ध में मारा जाकर स्वर्ग को प्राप्त होगा अथवा संग्राम में जीतकर पृथ्वी का राज्य भोगेगा। इस कारण है अर्जुन तू युद्ध के लिए निश्चय करके खड़ा हो जा।

11 हे धनञज्य। तू आसक्ति को त्यागकर तथा सिद्धि और आसिद्धि में समान बुद्धिवाला होकर येाग में स्थित हुआ कर्त्तव्यकर्मो को समता ही येाग कहलाता है। अर्थात् जो कुछ कर्म किया जाये उसके पूर्ण होने और न होने में तथा उसके फल में समभाव रहने का नाम समत्व है।

12 समबुद्धि युक्त पुरूष पुण्य और पाप दोनो को इसी लोक में त्याग देता है अर्थात् उनसे मुक्त हो जाता है इससे तू समत्वरूप योग में लग जा, यह समत्वरूप योग की कर्मो में कुशलता है। कर्म बंधन से छूटने का उपया है।

ज्ञान प्राप्ति पर मन संकल्प रहित हो जाने से वह कर्म करत हुआ भी उसके बंधन से मुक्त रहता है। फल प्राप्ति की इच्छा से जो भी कर्म किया जाता है उसका फल अवश्य होता है तथा उसका भोग उसे भोगना ही पड़ता है। अंहभाव के कारण मनुष्य अपने को कर्त्ता मानता है इसलिए वह कर्म फलों का भोक्ता भी हो जाता है। यही कर्म का नियम है। कर्म का कर्त्ता शरीर नहीं बल्कि मन है। जो शरीर की क्रियाओं का त्याग कर मन से वासना का त्याग नहीं करते वे कर्म बंधन से मुक्त नही हो सकत। वासना रहित ज्ञानी ही उनसे मुक्त होता है। वे कर्म करते हुए भी उनके फलों से मुक्त रहते है। अच्छा कर्म स्वर्ग का साधन हैव बुरा नकरा का। इस ग्रंथ में महर्षि वशिष्ठ कहते हैं।

संसार में ऐसा कोई पहाड़, आकाश, समुद्र स्वर्ग आदि नहीं है जहां पर अपने किये हुए कर्मो का फल नह मिलता है।

पूर्व जन्म में अथवा इस जन्म में भी कर्म किया गया है वह अवश्य ही प्रकट होता है। वह पुरूष का किया हुआ यत्न है। वह फल लाये बिना कभी नही रहता।

13 कर्म का स्वरूप – जगत में जिस क्रिया को कर्म कहा जाता है उसका सबसे प्रथम स्वरूप मानिसक है अतएव मन का स्पन्दन और कर्म एक ही है। कर्मो का बीज मन का कलनात्मक समुन्वेष है इसी का फल प्राप्त होता है। सब कर्मो का बीज मन का स्पन्दन है यह कहा भी जाता है और अनुभव में भी यही आता है। विविध प्रकार की क्रियाएं जो नाना प्रकार के फल लाती है, उसकी अनेक शाखाएं है।

कर्म बंधन से मुक्त होने की विधि–

आत्मा के अज्ञान से ही कर्म के कारण संल्प का उदय होता है। संकल्प युक्त होने से बंधन होता है इसलिए संकल्प का त्याग करो।

सम, शुद्ध और विकार रहित बुद्धि से जो कुछ भी किया जाता है वह कभी दोष नहीं लाता।

14 जैमिनी ऋषि के अनुसार – अग्निहोत्र, यज्ञ आदि कर्म कहलात है। प्रत्येक कर्म के अन्दर 'अदृष्ट' नामक एक शक्ति छिपी रहती है जिसके कारण मनुष्य के कर्मो का फल मिलता है। जैमिनि के लिए कर्म ही सब–कुछ है। मीयांसको के लिए कर्म ही प्रधान वस्तु है। गीता के अनुसार कोई भी काम कर्म कहलाता है। यज्ञ, दान और तप भी कर्म है दार्शनिक अर्थ में

देखना, सुनना, चखना, सूंघना छूना, चलना–फिरना, बोलना, साँस लेना आदि सब कर्म है। वास्तविक कर्म है चिन्तन। वस्तुतः कर्म राग और द्वेष से बनता है।

15 कर्मयोगः एक ज्ञान–साधन– निष्काम कर्मयोग की साधना से चित के सारे बल और पाप धुल जाते हैं और उससे चित्तशुद्धि या अंत–करण की पवित्रता आती है। शुद्ध अंत–करण से आत्म–ज्ञान का उदय होता है। मुक्ति का एकमात्र प्रत्यक्ष साधन आत्म–ज्ञान ही है। आग के बिना जिस प्रकार रखोई नही बन सकती, उसी प्रकार आत्म–ाान के बिना मनुष्य का उद्वारर नहीं होता, क्योंकि कर्म और अज्ञान परस्पर विरोधी नहीं है। अज्ञान का नाश ज्ञान से अवश्य होता है। जैसे प्रकाश से घने अन्धकार का होता है।

महाभारत में लिखा है "जब आईने की तरह आत्मा के अन्दर आत्मा दीखने लगता है तो पाप–कर्मो का नाश हो कर ज्ञान का उदय होता है।

16 कर्म का लक्षण है प्रवृति, संयास का लक्षण है ज्ञान इसलिए बुद्धिमान व्यक्ति ज्ञान होने पर संयास ग्रहण करे ।

निष्कर्ष–

कर्मयोग की क्रियात्मक साधना, जैसे पहिया चलता है, किन्तु धुरी स्थिर रहती है, वैसे ही मन को भगवान में स्थिर रखिये एंव शरीरेन्द्रिय से कर्म करते रहिये, यदि कोई यह समझे कि ईश्वर से प्रेम बढ़ जाएगा तो कर्म गड़गड़ होने लगेा, तो प्रथम तो ऐसा कम होगा ओर यदि हो भी तो उसकी परवाहन न करो। अन्ततोगत्वा कर्म छूट भी जाय तो तुम उस जिम्मेदारी से मुक्त हो। जान–बूझकर कर्म छोड़ देना एंव ईश्वार–प्रेम भी न करना अनुचित है। वह दण्ड का भागी होगा।

भारत में वर्षा, वृक्ष, नदी और संत निःस्वार्थ भाव से प्रतीक माने जाते है। वर्षा सभी का मानव, प्रवृति और पशु–पक्षियों के लिए समान रूप से लााि पहुंचाने के लिए होती है। वृक्ष छाया चाहने वालों को अपनी छाया देता है और फलों को प्राप्त करने के लिए वृक्ष को पत्थर मारने वालों को भी अपने मीठे फल दे देता है। नदी भी हर किसी के लिए है। हिरण अपनी प्यास उसी नदी से बुझता है जिससे एक बाघ। एक संत बिना भेदभाव अपने आशीर्वाद, अपनी शुभकामनाएं सभी को देता है।

निष्कास कर्म नये कर्म से बचने का मार्ग है और यह पूर्व कर्म को भी सुधार सकता है, क्षमा भाव व सहायता निष्काम कर्म है जो हमें कर्म के चक्रों से स्वतन्त्र कर देते हैं।

व्यक्ति को अपने कर्मो को ईश्वर में समर्पित होकर करने चाहिए जिससे वह कर्म चक्रों से स्वतंत्र हो जाता है।

संदर्भ –

1) महर्षि कणाद के शब्दों में–मानव चेतना, डॉ0 ईश्वर भारद्वाज, प्रकाशक –आ0डी0पाण्डेय, संस्करण 2017 ISBN 978.93.80190.64.8, पेज नं0 148

2) मानव चेतना, डॉ0 ईश्वर भारद्वाज, प्रकाश आर0डी0 पाण्डेय, संस्करण –2017, ISBN 978.978–9–. 80190–64–8, पेज नं0 148

3) मानव चेतना, डॉ0 ईश्वर भारद्वाज, प्रकाश आर0डी0 पाण्डेय, संस्करण –2017, ISBN 978–9–. 80190–64–8

4) मानव चेतना, डॉ0 ईश्वर भारद्वाज, प्रकाश आर0डी0 पाण्डेय, संस्करण –2017, ISBN 978–9–. 80190–64–8

5) श्री मद्भगवद गीता श्लोकर्थ सहित प्रकाशक–गीता प्रेस, गोरखपुर श्लोक संख्या–अध्याय –3 श्लोक संख्या–5

6) श्री मद्भगवद गीता श्लोकर्थ सहित प्रकाशक–गीता प्रेस, गोरखपुर श्लोक संख्या–अध्याय –2 श्लोक संख्या–5

7) महर्षि पंतजलि प्रणीत योगदर्शन, स्वामी रामदेव, प्रकाशक–दिव्य प्रकाशन ISBN 81–89235–34–6
8) पांतञ्ल योग सूत्र के आधारभूत त्तव पेज नं0 222
9) श्री मद्भगवदगीता, श्लोकार्थ सहित गीता प्रेस गोरखपुर अध्याय–2 श्लोक संख–37
10) श्री हरिः साधारण भाषा टीका सहित मोटे अक्षरवाली गीता प्रेस गोरखपुर अध्याय– 2 श्लोक संख्या 48
11) श्री हरिः साधारण भाषा टीका सहित मोटे अक्षरवाली गीता प्रेस गोरखपुर अध्याय–2 श्लोक संख्या–50
12) योग वशिष्ठ के सिद्धांत, सम्पादक एंव संकलबकर्त्ता– नन्द लाल दशोरा, प्रकाशक–रणधीर प्रकाशन, पेज नं0 203, इक्कीसवां प्रकरण
13) कर्मयोग साधना, प्रथम अध्याय–सेवायोग पेज नम्बर– 9, प्रकाशक–दडिवाइन लाइफ सोसायटी
14) कर्मयोग साधना, प्रथम अध्याय–सेवायोग पेज नं0 –13, शान्ति पर्व – 204/6 प्रकाशक –द डिवाइन लाईफ सोसायटी
15 प्रवृति लक्षणं कर्म ज्ञानं संन्यासलक्षणम्
तस्माजानं पुरस्कृत्य संन्यसेदिह बुद्धिमान।।16।।
योग –सन्यास उपनिषद, पेज नं0 –12 प्रकाशक 7 चौखमीा पब्लिशर्स
ISBN 978–9–.89469–41–2 (Set) प्रथम संस्करण 2015